साधना के अनुभव

आत्मा उस आदि शक्ति से निकलकर, जिसकी वह किरण है, ब्रम्हाण्ड में उतरी किन्तु यहां पर उसके ऊपर अंतःकरण (मन + बुद्धि +चित्त + अहंकार) यानी सूक्ष्म माया का पर्दा चढ़ा. जब वहां पर भी अपने संस्कारों की वजह से अचेत रही, तो इस पिंड देश में उतारी गई जो कि मलीन माया का रूपक है. यानी जहां इंद्रिय भोग का रस मिलता है, ताकि वह अचेत आत्मा चेत अवस्था में आ जावे. यहां आकर वह अपने पिछले संस्कारों के बस चेत अवस्था में तो आगई, लेकिन इंद्रिय भोगों मेँ फस गई, यानी अपने असली देश को भूल कर इस पिंड देश को अपना देश समझ बैठी और यहां के भोग विलास को अपना ध्येय समझ बैठी. जब तक ऊपर के परदे न हटें उसको अपने असली देश का ध्यान नहीं आ सकता और न अपने असल को ही समझ सकती है.

बुद्धि -- जिसकी वजह से यह आत्मा इस तमाम दुनियाँ की सारी योनियों में श्रेष्ठ मानी जाती है- और जो उसका असली साथी है-इस दुनियाँ की मलीन माया में फस गयी, इसी को अपना लिया और जो भी वह सोचती है अपने स्वार्थ के लिए सोचती हैं. अतः बजाय छुटकारा पाने के वह दुनियाँ में फसती जाती है और दुःख पर दुःख उठाती है. सुःख भी मिलता है परंतु वह तो थोड़ी देर को मिलता है. अब अगर वह इस तरह फंसती ही रहे या फंसी पड़ी रहे, तो उसे (आत्मा को) कभी भी आपने वतन (निज देश) की याद न आवे और वह कभी भी छुटकारा न पावे.

परमात्मा के प्रेम से यह दुनियाँ पैदा हुई है. परमात्मा चाहता है कि जैसे मैं सदा- सदा आनंदित या ख़ुश हूँ, मेरे जैसे अनेक हो जावें. जब जीव दुनियाँ में इस तरह फंस जाता है ,तो उसकी (परमात्मा की) दया और मोहब्बत की लहर में जोश आता है और तब संत, ऋषि, औलिया, पैग़म्बर, अवतार वगैरह का जन्म होता है जो उस जीवात्मा को आनंद की तरफ़ ले जाना चाहते हैं और उसके हित की बात बताते हैं.

जब तक जीव दुनियाँ की झूठी मुहब्बत में फँसा है, जो थोड़ी देर का सुःख देकर उमर भर को रुलातीं है और आवागमन में फंसाती है नहीं छूटता, तब तक उसको ज्ञान नहीं होता और अपने हित की बात नहीं सुनता. जीव का यह मोह, दुनियाँ की तकलीफों, दुनियाँ की बेबफ़ाई, यहां की नाशवान हालत को देखकर, बार-बार तकलीफें उठाकर कम होने लगता है. यही काल का क़र्ज़ा देना होता है. जब उसे अपने सँस्कार में तकलीफें उठा-उठा कर तज़ुर्बा हो जाता है कि दुनियाँ दुःखों का घर है और यहां पर असली सुःख मिलना मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन हो जाता है, तभी वह जीव संतों की सोहबत (संग) क़बूल करता है. यह पहला सबक़ है.

संत-मत केवल एक ईश्वर में विश्वास करता हैं. सूक्ष्म रूप में वह 'शब्द ' है, प्रकाश हैं, प्रेम है, आनंद है, जिनकी वृत्ति बाहर की ओर है. वे उसे अन्तर्मुखी बनायें. सतगुरु से उसकी युक्ति जानकर आँतरिक ध्यान करने का अभ्यास करें. ईश्वर तो सभी जगह मौज़ूद है.

इधर- उधर भटक कर समय नष्ट न करें. उसे अपने अंतःकरण में देखें. इस काम में ऐसे महापुरुष का सहारा लें जिसने आत्मसाक्षात्कार कर लिया है, तभी फ़ायदा होगा. बिना गुरु के फ़ायदा नहीं होगा. गुरु की मदद से हम अपनी attention (ध्यान) को अंतःकरण पर केन्द्रित कर सकेंगे. जलता हुआ दीपक ही बुझे हुए दीपक को जला सकता है. इसलिए संतों ने बार -बार कहा है कि बिना आत्मदर्शी (गुरु) का सहारा लिए साधारण जिज्ञासु अपने अंतःकरण के पर्दों को साफ नहीं कर सकता. जब तक परदे साफ न हों, आवरण न हटें तब तक प्रीतम के दर्शन कैसे हो सकते हैं? जब तक आप दुनियाँ से बेज़ार (दुखी) न होंगें तब तक ईश्वर प्रेम (जो आप में प्राकृतिक रूप से मौज़ूद है लेकिन आवरणों से दबा हुआ है) जागेगा नहीं. यदि कोई वास्तव में पूर्ण संत है तो उसकी सोहबत से आवरण साफ होने लगते हैं और ईश्वर प्रेम जागने लगता है. उसके पास बैठने से, बिना कुछ बोले, बिना कुछ पूछे, आनंद का, शीतलता का आभास होने लगता है, परंतु यह स्थायी नहीं रहता. यदि आप लगातार उनके पास जाते रहें, उनका सत्संग करते रहें तो क्रमशः दुनियाँ से बेज़ारी, उपरामता होने लगतीं है. हालाँकि पहले तो यह भी अस्थाई होती है परंतु सत्संग और अभ्यास से इनमें मज़बूती आने लगती है.

हमारी आत्मा ईश्वर का अंश है, ईश्वर की बेटी ह, और मन शैतान की औलाद है, शैतान का बेटा है. यदि हम गुरु के आश्रित नहीँ रहेँगे तो शैतान हम पर हावी हो जायेगा और हमारी आत्मा का हनन कर लेगा. सतगुरु सर्व विकार रहित होता है. वह काम -क्रोधादिक विकारों के भंवर जाल से ऊपर निकल चुका होता है, उसका रास्ता जाना हुआ होता है. अतः उसकी आज्ञानुसार चलना और उसके अनुकूल अपना आचरण बनाना चाहिए. यदि कोई ऐसा करेगा तो निःसंदेह वह काम-क्रोधादिक विकारों के भँवर जाल से निकलने में सफल हो सकेगा और शैतान उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा. इसलिए सच्चे गुरु की खोज करो.

जब आत्मा दयाल देश से उतरती हुई इस पिण्ड देश (मनुष्य शरीर) में आई तो जिस-जिस चक्र पर ठहरी वहाँ पर एक शब्द हुआ और एक एक प्रकाश. इस तरह अठारह चक्र बने. अब स्वाभाविक तरीक़ा यह है कि यह आत्मा जिस रास्ते से आयी उसी रास्ते वापस ऊपर को जावे. शब्द को सुनना या प्रकाश को देखना और अपनी सुरत (attention) को चक्रों पर ठहर -ठहरा कर ऊपर चढ़ाते जाना ही संतों का सुरत-शब्द-योग है. तीन तरह से बहुधा हम दुनियाँ में फसते हैं- देखकर, सुनकर और सूंघकर. अतः इनसे सम्बंधित इंद्रियों (आँख , कान, नाक) पर ताला लगा दो और इनका मुँह अन्दर की ओर फेर दो. अन्तर का शब्द सुनो और अन्तर का प्रकाश देखो. धीरे- धीरे अभ्यास करके प्रकाश और शब्द पर अपनी attention(तवज्जह, सुरत) को जमाओ लेकिन उनमें फँसो मत क्योंकि ये भी रास्तें की चीजें हैं. अपनी चढ़ाई जारी रखो जब तक कि धुर-धाम में न पहुँच जाओ. यदि सचमुच तुमने किसी सच्चे गुरु का सहारा पकड़ लिया है तो वह तुम्हें धुर-धाम में पहुंचा कर छोड़ेगा. ऐसे महापुरुष का तो केवल ध्यान करने से ही उसके सब गुण स्वतः ही तुममें उतरते चले आयेंगे और एक दिन तुम वही बन जाओगे जो वह स्वयँ है.

अगर कोई शिष्य सतगुरु में पूर्ण निष्ठा रखने वाला, पूर्ण आदर करने वाला है जो सतगुरु को हर क्षण हाज़िर नाज़िर जाने और एक क्षण के लिए भी ग़ाफ़िल न हो, तो उसके लिए कुछ भी करने-धरने की ज़रूरत नहीं है. वह एक क्षण के गुरु प्रेम में ही सब कुछ पा लेता है. 'शब्द ' क्या है? शब्द वह आवाज़ है जो धुर धाम से आई है. शब्द से ही दुनियाँ पैदा हुई और शब्द में ही लय हो जाती ह . जो मुँह से उच्चारण हो वह शब्द नहीं नाम है. संतों ने 'शब्द ' उसी को कहा है जो आपके ख़्याल आपकी सुरत को आकर्षित करके अंतःकरण की ओर ले जाये, ईश्वर के ध्यान में लीन करा दे, जहाँ आपको आनंद ही आनंद मिले .

सब क्रिया कर्म और अभ्यास का नतीज़ा यह है कि सब का सहारा छोड़ कर उस मालिक का सहारा लें जो प्रेम, आनंद और ज्ञान का भंडार है. तभी हमको सच्चा सुःख मिल सकता है और यही हमारा असली लक्ष्य है यह मौका सिर्फ इन्सानी जिंदगी में ही प्राप्त होता है. हर इन्सान का फर्ज़ है कि अपनी ख़्वाहिशात को पूरा करते हुए, यानी दुनियाँ में कर्म करते हुए, अपने असली लक्ष्य को न भूले. अगर वह ऐसा करेगा तो एक न एक दिन अपने असली लक्ष्य को पा जाएगा और पूर्ण ज्ञान, पूर्ण आनंद और ईश्वर का प्रेम हासिल कर लेगा. और अगर अपने असली लक्ष्य को छोड़ कर इंद्री भोग, मन की वासनाओं, बुद्धि की चतुराई और इन सब के अहंकार में फंसा रहेगा तो नीचे उतार होता जायेगा और न मालूम फिर कब उसको इस क़ैद से छूटने का मौक़ा मिले. यह ख़्याल कि आत्मा इन्सानी योनि अख्त्यार करके फिर नीचे नहीं जा सकती, सरासर ग़लत है. जो ऊपर चढ़ता है वह नीचे गिरता है, जो नीचे गिरता है वह ऊपर भी चढ़ता है- यह उसूल हैं. इसलिए आदमी को चाहिये कि अपनी ख़्वाहिशात को धर्म का सहारा ले कर पूरी करे लेकिन उसमें पूँजी, जो उसके पास मुकर्रिर मिक़दार में है, कम से कम लगाए और जो पूँजी छिपी हुई है, यानी जो शक्ति आत्मा की छिपी हुई है, उसको अभ्यास करके हासिल करे और इस पूँजी की मदद से, यानी अभ्यास और सत्संग करके, ऊपर की चढ़ाई करे ताकि ईश्वर से नज़दीक़ी हासिल हो सके. जब तक ईश्वरीय गुण हासिल नहीं होते उसको क़ुरबत (सामीप्य) नसीब नही होती, और जब तक क़ुरबत नसीब नहीं होती आत्मा को चैन नहीं मिल सकता. इसलिए दुनिया के सब काम करते हुए किसी न किसी तरीक़े से

(जिसको आपका मन पसंद करता हो) उस ईश्वर को याद बराबर करते रहना चाहिए. यही सिर्फ एक ज़रिया है जिससे जीव हमेशा-हमेशा का सच्चा और अपार सुःख हासिल कर सकता है. यही हमारा असली परमार्थ है और यही उस परम पिता परमात्मा का दुनिया की रचना करने का मतलब है.

ईश्वर सबको ज्ञान दे .